

पावित्री देवी और एक अन्य

बनाम

दरबारी सिंह और अन्य

7 सितंबर, 1993

[कुलदिप सिंह और के. रामास्वामी, न्यायमूर्तिगण]

हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956: धारा 30—वसीयती उत्तराधिकार—मिताक्षरा सहदायिकि—बंटवारे का वाद—अभिनिर्धारित, विभाजन की मांग करने पर मृतक सहदायिकि के अन्य सदस्यों से अलग हो गया और वसीयती स्वभाव से अपने अविभाजित हिस्से और ब्याज का निपटान करने का हकदार बन गया—वसीयती निपटान का अर्थ है संपत्ति का निपटान जो दस्तावेज के निष्पादन पर तत्काल प्रभाव के बजाय मृत्यु के बाद प्रभावी होगा—किसी सहदायिक द्वारा अपने अविभाजित हिस्से का उपहार देना अमान्य है।

धारा 6—मिताक्षर सहदायिकि—ब्याज का हस्तांतरण—सह-पक्षकार द्वारा विभाजन के लिए वाद वादी की मुकदमेबाजी — वाद लंबित रहने के दौरान वादी की मृत्यु हो गई—वादी की बेटी वर्ग-। उत्तराधिकारी होने के कारण निर्वसीयत उत्तराधिकार द्वारा संपत्ति प्राप्त करने में सफल होती है।

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908: आदेश 22, नियम 3—मिताक्षरा कोपार्सेनरी के विभाजन के लिए मुकदमा—वाद लंबित रहने के दौरान वादी की मृत्यु हो गई—मृतक की बेटी को प्रथम श्रेणी का उत्तराधिकारी होने के कारण, संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने का हक है।

शब्द और वाक्यांश: "वसीयतनामा"—का अर्थ।

अपीलकर्ता के पिता ने अपने भाइयों के खिलाफ विभाजन का मुकदमा दायर किया और उनके कानूनी उत्तराधिकारी सह-स्थायी संपत्तियों में अपने हिस्से का दावा करते हैं। विचारण न्यायालय ने मुकदमा खारिज कर दिया था। जब उच्च न्यायालय के समक्ष अपील लंबित थी, वादी की मृत्यु हो गई। अपीलकर्ता ने खुद को और अपने बेटे को वादी का कानूनी

उत्तराधिकारी होने का दावा करते हुए प्रतिस्थापन के लिए आवेदन दायर किया। उसने खुद को मृतक की बेटी होने का दावा किया। यह भी दावा किया गया कि उसके पिता ने एक पंजीकृत उपहार विलेख के माध्यम से उसे संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपना पूरा हिस्सा दे दिया और उसे संपत्ति का कब्जा सौंप दिया।

अपील न्यायालय ने विचारण न्यायालय को यह निर्देश दिया कि वह वादी की मृत्यु की तिथि तथा संपत्ति पर अपीलकर्ताओं के अधिकार के संबंध में जाँच कर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करे। विचारण न्यायालय ने यह पाया कि वादी की मृत्यु 8 जून 1981 को नहीं, बल्कि 6 मई 1981 को हुई थी और परिणामस्वरूप अपील समाप्त हो गई। यह भी पाया गया कि अपीलकर्ता उसकी पुत्री नहीं थी।

प्रतिवेदन प्राप्त होने पर उच्च न्यायालय ने यह माना कि चूँकि वादी की मृत्यु 8 जून 1981 को हुई थी, इसलिए प्रतिस्थापन हेतु दायर आवेदन समय-सीमा के भीतर था। तथापि, उसने विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष को स्वीकार किया कि अपीलकर्ता मृतक का उत्तराधिकारी नहीं था। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि निष्पादित उपहार विलेख संदिग्ध है और अपील को निरस्त कर दिया।

विशेष अनुमति से दायर अपील में अपीलकर्ताओं ने यह तर्क दिया कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 30 के अंतर्गत मृतक को संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने अविभाजित हिस्से का वसीयतनामा द्वारा, जिसमें अपनी पुत्री के पक्ष में उपहार के रूप में देना भी सम्मिलित है, निपटान करने का अधिकार था; कि मृतक अपने संपत्ति में हित को उपहार के माध्यम से भी दान कर सकता था और इसलिए अपीलकर्ता दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 नियम 10 के अंतर्गत अधिकारों के उत्तराधिकारी के रूप में संपत्ति का उत्तराधिकारी बनी और अपील को जारी रखने हेतु अपने पिता की विधिक प्रतिनिधि के रूप में अभिलेख पर लाए जाने की अधिकारी थी; तथा यह कि अपीलकर्ता, मृतक वादी की पुत्री होने के नाते, समान रूप से दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22

नियम 3 के अंतर्गत श्रेणी i की उत्तराधिकारी होने के कारण पुत्री के रूप में भी अभिलेख पर लाई जा सकती थी।

उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करते हुए और मामले को उसके पास भेजते हुए, यह न्यायालय

अभिनिर्धारित: 1.1. मृतक ने विभाजन की माँग करते हुए उस संबंध में मुकदमा दायर किया था, जिसमें उसने मिताक्षरा कोपार्सनरी में अपने विशिष्ट हिस्से का दावा किया। अतः वह कोपार्सनरी के अन्य सदस्यों से विभक्त माना गया और यद्यपि उसकी मृत्यु की तिथि तक सीमाओं और मापों द्वारा वास्तविक विभाजन नहीं हुआ था, फिर भी वह संयुक्त परिवार का विभाजित सदस्य था। धारा 30 के प्रवर्तन से उसे सहभाजिता में अपने अविभाजित हिस्से और हित का वसीयतनामे द्वारा निपटान करने का अधिकार प्राप्त था।

[168-डी-ई]

जलजा शेट्टी बनाम लक्ष्मी शेट्टी, [1973] 1 एससीआर 707, अनुसरण किया गया
फूलचंद बनाम गोपाल लाल, [1967] 3 एससीआर 153; *बाबा बनाम थिम्मा*, (1884) 7 मद्रास 357; *सोरजीमनी डोसी बनाम दीनोबुंदो मुलिक*, (1857) 6 मूर भारतीय अपीलें 553 पर 523; *टैगोर बनाम टैगोर*, (1872) इंडियन अपीलस (पूरक) 47 और *सुब्बारामनी बनाम रामनम्मा*, (1920) आई.एल.आर. 43 मद्रास 420, संदर्भित।

1.2. वसीयती व्यवस्था का अर्थ है संपत्ति का ऐसा निपटान जो मृत्यु के बाद प्रभावी होगा, न कि दस्तावेज़ के निष्पादन के समय से ही। [167-सी]

वेबस्टर : *कॉम्प्रिहेन्सिव डिक्शनरी*, अंतर्राष्ट्रीय संस्करण पृष्ठ 1298 ; पी. रामहथा अय्यर : *लॉ लेक्सिकन पुनर्मुद्रित संस्करण*, 1987 पृष्ठ 1271 और *ब्लैक लॉ डिक्शनरी*, 1475 का छठा संस्करण 1991, संदर्भित।

1.3. मिताक्षरा परिवार में किसी सहदायिक द्वारा अपने अविभाजित हिस्से का उपहार देना पूर्णतः अमान्य है। सहदायिक संपत्ति का उपहार द्वारा किया गया कोई भी निपटान,

अन्य सहदायिकों की सहमति के बिना, या सहदायिकों के बीच, या असाधारण परिस्थितियों में, शून्य है। [170-ई]

मेन का हिंदू कानून पृष्ठ 685 ; एन. आर. राघवचारियार का हिंदू कानून पृष्ठ 236 संदर्भित किया गया।

रामलिंगा बनाम नारायण, (1922) 49 भारतीय अपीलें, 168 पर 173; लक्ष्मण दादा नाइक बनाम रामचन्द्र, (1881) 7 भारतीय अपीलें; 181 (पी.सी.); अप्पनपात्रा बनाम श्रीनिवास, (1917) आई.एल.आर. 40 मद्रास 1122; द्वारमपुडी नागरथम्बा बनाम कुनुकु रामय्या और अन्य, (1968) 1 एससीआर 43; वेंकट सुब्बाम्मना बनाम रत्नम्मा, एआईआर (1987) एससी 1757 और मुकुंद सिंह बनाम वजीर सिंह, [1972] 4 एससीसी 178, अनुसरण किया गया।

2.1. उपहार हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 30 के तहत एक वसीयतनामा उत्तराधिकार नहीं है। इसलिए, अपीलकर्ता दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 10 के तहत मृतक वादी के हित का प्रतिनिधित्व करने के लिए हस्तांतरण द्वारा कोई ब्याज प्राप्त नहीं करता है।

3.1. तत्काल मामले में, साक्ष्य यह स्थापित करता है कि अपीलकर्ता मृतक की बेटी है। अपीलकर्ता की पितृत्व सिद्ध करने के लिए, अर्थात् यह स्थापित करने हेतु कि वादी उसका पिता था, 11 गवाहों की विस्तृत मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत की गई थी। उच्च न्यायालय ने उस साक्ष्य की सूक्ष्म और गहन समीक्षा करने पर कोई ध्यान नहीं दिया। मौखिक साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए कोई ठोस आधार नहीं था। इसके अतिरिक्त, वादी ने स्वयं वर्ष 1963 में वादपत्र के साथ संलग्न वंशावली में अपीलकर्ता को अपनी पुत्री तथा उसके पुत्र को अपना पौत्र बताया था। उपहार विलेख में भी उसने यह पुनः दोहराया कि वह उसकी पुत्री है। [172-सी-डी]

4. किसी निजी पक्ष की अभिरक्षा से प्राप्त निजी दस्तावेज़, चाहे वह 30 वर्ष पुराना ही

क्यों न हो, सार्वजनिक दस्तावेज़ के समान महत्व नहीं रख सकता और बच्चे के पितृत्व से इनकार करने के लिए साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, जब प्रचुर मात्रा में मौखिक साक्ष्य इसके विपरीत हो। [172-बी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 1993 की दीवानी अपील सं. 1592।

मूल डिक्री सं. 582/68 के अपील में पटना उच्च न्यायालय के 11.2.1984 के निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थियों की ओर से रंजीत कुमार।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

के. रामास्वामी न्यायमूर्ति 1. एक ब्रह्मदेव सिंह, तूसो सिंह का पुत्र उनके भाइयों और उनके उत्तराधिकारियों के खिलाफ 1963 का विभाजन स्वत्व वाद संख्या 13 दायर किया गया, शिकायत के साथ संलग्न अनुसूचियों में उल्लिखित सहदायिक संपत्तियों में 1/6 भाग का दावा कर रहे थे। विचारण न्यायालय ने मुकदमा खारिज कर दिया। पटना उच्च न्यायालय में एफ.ए. सं. 582/68 लंबित था, लेकिन 8 जून, 1981 को उनकी मृत्यु हो गई। अपीलकर्ता, पवित्रा देवी ने उन्हें और उनके बेटे को कानूनी प्रतिनिधियों के रूप में प्रतिस्थापित करने के लिए एक आवेदन दायर किया। उनका दावा दो आधारों पर आधारित है, अर्थात् ब्रह्मदेव सिंह की बेटी के साथ-साथ पंजीकृत उपहार विलेख प्रदर्श 2 दिनांक 5 अगस्त, 1980 को उनके पिता ने संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपना पूरा हिस्सा देकर उन्हें 9.96 एकड़ भूमि के अधिकार में रखा। जब मृत्यु की तारीख और उत्तराधिकारी के रूप में उसकी पात्रता के तथ्य को याचिकाकर्ता न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं द्वारा जारी किया गया था, तो विचारण न्यायालय को साक्ष्य दर्ज करने और उस पर अपनी प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। विचारण न्यायालय ने भारी मात्रा में साक्ष्य दर्ज करने पर पाया कि ब्रह्मदेव सिंह की मृत्यु 8 जून, 1981 को नहीं, बल्कि 6 मई, 1981 को हुई थी और परिणामस्वरूप अपील समाप्त हो गई। विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि अपीलकर्ता उसकी बेटी नहीं है। उच्च

न्यायालय ने कहा कि "साक्ष्य के लिए यह स्पष्ट है कि ब्रह्मदेव सिंह की मृत्यु 8 जून, 1981 को हुई थी" और प्रतिस्थापन के लिए आवेदन सीमित था। तथापि, यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलकर्ता उसका उत्तराधिकारी नहीं है और ब्रह्मदेव सिंह द्वारा निष्पादित उपहार विलेख संदिग्ध था। तदनुसार याचिका 11 फरवरी, 1984 की डिक्री और निर्णय से खारिज कर दी गई थी। इस प्रकार विशेष अनुमति द्वारा यह अपील।

2. यद्यपि विशेष अनुमति प्रदान किए जाने से पूर्व और पश्चात् उत्तरदाताओं को तामील कर दी गई थी, तथापि न तो कोई स्वयं उपस्थित हुआ और न ही किसी अधिवक्ता के माध्यम से। अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री रंजीत कुमार ने हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 संक्षेप में 'अधिनियम' की धारा 30 पर भरोसा रखते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया कि ब्रह्मदेव सिंह को संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने अविभाजित हिस्से का वसीयतनामे द्वारा, जिसमें अपनी पुत्री के पक्ष में उपहार देना भी सम्मिलित है, निपटान करने का अधिकार था। सहभाजिता संपत्ति में उसके द्वारा धारण किया गया हित उपहार विलेख द्वारा दान किया जा सकता था। इस प्रकार अपीलकर्ता, अपने पिता ब्रह्मदेव सिंह की, दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 नियम 10 के अंतर्गत अधिकारों की उत्तराधिकारी बनी। निस्संदेह, आदेश 22 नियम 10 उस संपत्ति-भागी या उस व्यक्ति पर लागू होता है जो वाद के लंबित रहने के दौरान, संपत्ति में हित का अधिग्रहण उत्तराधिकार द्वारा करता है। अतः वह अपील को जारी रखने के लिए अपने पिता की विधिक प्रतिनिधि के रूप में अभिलेख पर लाई जाने की अधिकारी थी। समान रूप से, पुत्री होने के नाते, अनुसूची में वर्ग-1 की उत्तराधिकारी होने के कारण, उसे दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 3 के अंतर्गत भी अभिलेख पर लाया जा सकता था। प्रश्न यह है कि क्या ब्रह्मदेव सिंह द्वारा सहभाजिता संपत्ति में अपने हित का उपहार विधि में वैध है। अधिनियम की धारा 30(1) यह प्रावधान करती है कि "कोई भी हिंदू, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 या उस समय प्रवृत्त एवं हिंदुओं पर लागू किसी अन्य विधि के प्रावधानों के अनुसार, अपनी ऐसी किसी भी संपत्ति का, जिसे वह इस

प्रकार निपटान करने में सक्षम है, वसीयत या अन्य वसीयतनामे द्वारा निपटान कर सकता है।" इसके स्पष्टीकरण में यह उपबंध है कि मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में किसी पुरुष हिंदू का हित..... इस अधिनियम या उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में निहित किसी भी बात के होते हुए भी इस धारा के अर्थ में ऐसी संपत्ति माना जाएगा जिसका निपटान उसके द्वारा या उसके द्वारा किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 6 यह प्रावधान करती है कि जब कोई पुरुष हिंदू इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् मृत्यु को प्राप्त होता है और उसकी मृत्यु के समय मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में उसका हित विद्यमान होता है, तो उसका वह हित सहभाजिता के जीवित सदस्यों पर उत्तरजीविता द्वारा जाएगा। किंतु यदि मृतक अपने पीछे अनुसूची के वर्ग-1 में विनिर्दिष्ट कोई स्त्री संबंधी छोड़ जाता है, तो मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में मृतक का हित, यथास्थिति, इस अधिनियम के अंतर्गत वसीयतनामे या अवसीयत उत्तराधिकार द्वारा जाएगा, न कि उत्तरजीविता द्वारा।

3. वेबस्टर के *कॉम्प्रिहेन्सिव डिक्शनरी* के अंतर्राष्ट्रीय संस्करण के पृष्ठ 1298 पर 'वसीयती' शब्द का अर्थ इस प्रकार बताया गया है: (i) वसीयत से व्युत्पन्न, वसीयत द्वारा प्राप्त, या वसीयत में निर्धारित; (ii) वसीयत द्वारा नियुक्त या प्रदान किया गया, या उसके अनुसार किया गया; (iii) वसीयत से संबंधित, या वसीयत के प्रशासन या निपटान के लिए, वसीयतनामा। पी. रामनाथ अय्यर द्वारा लिखित लॉ लेक्सिकन में, [पुनर्मुद्रण संस्करण 1987 पृष्ठ 1271] वसीयती अनुदेश को "वसीयती अनुदेश" के रूप में परिभाषित किया गया था जो ऐसी घटना से पहले किसी भी अधिकार की घोषणा या सृजन का प्रयास किए बिना, मृत्यु के बाद अपनी संपत्ति के निपटान के बारे में निर्माता की वर्तमान इच्छा की घोषणा करता है। ब्लैक की *लॉ डिक्शनरी* [6 संस्करण 1991] पृष्ठ 1475 में "वसीयती स्वभाव" को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—"मालिक की मृत्यु पर दूसरे को संपत्ति का हस्तांतरण। उपहार, वसीयत या वसीयत के माध्यम से संपत्ति का निपटान ऐसा विलेख जो तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक कि अनुदानकर्ता की मृत्यु न हो जाए या उस घटना तक न हो।" संपत्ति

हस्तांतरण अधिनियम की धारा 123 एक उपहार द्वारा स्वभाव प्रदान करती है जो दाता के जीवनकाल के दौरान भी प्रभावी होती है और जैसे ही इसे पंजीकृत किया जाता है और सामान्य रूप से उसमें संपत्ति का कब्जा दिया जाता है। अधिनियम की धारा 30 न केवल कानून की घोषणात्मक है जैसा कि यह अधिनियम से पहले था, बल्कि जैसा कि अब अधिनियम के प्रावधानों द्वारा संशोधित किया गया है। यह घोषणा करता है कि कोई भी हिंदू वसीयत या अन्य वसीयतनामा के माध्यम से अपनी संपत्ति या सह-स्वामित्व में ब्याज का निपटान कर सकता है जो भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 के प्रावधानों या हिंदुओं पर लागू किसी अन्य कानून के अनुसार उसके द्वारा इस तरह से निपटाया जा सकता है। इसकी व्याख्या वास्तव में भौतिक है। इसलिए, वसीयती स्वभाव का अर्थ होगा संपत्ति का निपटान जो दस्तावेज़ के निष्पादन पर तत्काल प्रभाव के बजाय मृत्यु के बाद प्रभावी होगा। एक वसीयतनामा स्वभाव आम तौर पर एक वसीयत या एक उपदित्सा द्वारा प्रभावित होता है जिसका अर्थ है वसीयत के विस्तार, परिवर्तन या उसके स्वभाव में वृद्धि के संबंध में बनाया गया एक उपकरण और इसे वसीयत का हिस्सा माना जाता है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 के धारा 2 (एच) में परिभाषित वसीयत का अर्थ है वसीयतकर्ता की अपनी संपत्ति के संबंध में इरादे की कानूनी घोषणा जिसे वह अपनी मृत्यु के बाद लागू करना चाहता था। यह *जीवितावस्था* में अंतरण को सीमित करता है। जबकि उद्यमि उपहार एक वर्तमान व्यवस्था है, यह विधिवत निष्पादन और पंजीकरण तथा सामान्यतः कब्जे की सुपुर्दगी पर प्रभावी हो जाता है। धारा 30 यह स्पष्ट करती है कि अधिनियम के तहत वसीयती स्वभाव से भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार निपटा जाएगा। उक्त अधिनियम की धारा 55 और अनुसूची 3 वसीयत या संहिता द्वारा वसीयती उत्तराधिकार द्वारा हिंदुओं के बीच उत्तराधिकार को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया निर्धारित करती है। धारा 30 गैर-बाध्यकारी खंड को नियोजित करती है और जिसके द्वारा मिताक्षरा विधि से शासित सहभाजिता संपत्ति पर लागू पूर्ववर्ती अथवा किसी अन्य प्रवृत्त विधि के संचालन को अपवर्जित

किया गया है। इसके स्पष्टीकरण में एक कानूनी कल्पना का समावेश किया गया है और हिंदू पुरुष या स्त्री को अपने हित का निपटान वसीयत अथवा विधि द्वारा मान्य किसी अन्य वसीयतनामात्मक व्यवस्था के माध्यम से करने का अधिकार प्रदान किया गया है, जो उसकी मृत्यु के पश्चात् प्रभावी होती है। अतः यह कल्पना करना कठिन है कि उपहार द्वारा किया गया निपटान धारा 30 के अंतर्गत वसीयतनामात्मक उत्तराधिकार का स्वरूप धारण करता है।

4. पूर्व-मौजूदा कानून का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाएगा। *जलजा शेडथी बनाम लक्ष्मी शेडथी*, [1973] 1 एससीआर 707 में, जिस पर श्री रणजीत कुमार ने भरोसा किया है, इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा:

"विभाजन की मांग पर स्थिति में विभाजन है, और भले ही धन और सीमा द्वारा विभाजन नहीं हुआ हो, लेकिन उसके बाद उस परिवार को कभी भी अविभाजित परिवार नहीं माना जा सकता है, और न ही सह-भागीदार के हित को अविभाजित हित माना जा सकता है। हिंदू कानून में यह एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि एक संयुक्त हिंदू परिवार के सदस्य को संयुक्त परिवार के अन्य सदस्यों को अपने निश्चित और स्पष्ट इरादे से सूचित करने का अधिकार है कि वह खुद को परिवार से अलग कर लेगा और कई में अपने हिस्से का आनंद लेगा। दूसरों के लिए इस तरह का एक स्पष्ट इरादा स्थिति में विभाजन के बराबर होगा और इस तरह के विभाजन पर उसे संयुक्त परिवार की संपत्ति के अपने विशिष्ट हिस्से का वास्तविक विभाजन प्राप्त करने का अधिकार होगा, जिसमें तब तक उन सभी का अविभाजित सह-आंशिक हित था, और जिसमें उनमें से कोई भी यह दावा नहीं कर सकता था कि उसे इसके किसी भी विशिष्ट हिस्से पर कोई अधिकार था। एक बार जब विभाजन का निर्णय स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया जाता है और उसके सह-भागीदारों को स्पष्ट रूप से सूचित कर दिया जाता है कि अन्य सह-भागीदार सहमत हैं या नहीं, तो संयुक्त स्थिति का तत्काल विच्छेद प्रभावी हो जाता है जिसके लिए वह स्वीकार्य रूप से हकदार है,

निर्दिष्ट हो जाता है।

5. विभाजन की माँग करते हुए तथा उस संबंध में मिताक्षरा सहभाजिता में अपने विशिष्ट हिस्से का दावा करते हुए वाद दायर करने के कारण, ब्रह्मदेव सिंह की स्थिति सहभाजिता के अन्य सदस्यों से पृथक हो गई थी। यद्यपि उसकी मृत्यु की तिथि तक सीमाओं और मापों द्वारा वास्तविक विभाजन (मेट्स एंड बाउंड्स द्वारा विभाजन) नहीं हुआ था, फिर भी वह संयुक्त परिवार का विभाजनकारी सदस्य था। धारा 30 के प्रवर्तन से उसे सहभाजिता में अपने अविभाजित हिस्से एवं हित का वसीयतनामात्मक निपटान करने का अधिकार प्राप्त था।

6. *फूलचंद बनाम गोपाल लाल*, [1967] 3 एससीआर 153 इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मुकदमा दायर करने के बाद संयुक्त परिवार के सदस्यों के बीच स्थिति में विभाजन था, भले ही वे पहले अलग हो गए थे। उस मामले में एक फरमान पारित किया गया था। सोहन लाल ने गोपाल लाल के पक्ष में वसीयत करके अपना हिस्सा दिया था। इस न्यायालय ने माना कि सोहन लाल, अविभाजित सहदायिक संपत्ति में अपने हिस्से के स्वामी होने के नाते, संयुक्त परिवार की संपत्ति में से प्राप्त अपने अविभाजित हिस्से को वसीयत द्वारा देने के लिए सक्षम थे। यह वसीयत सहदायिकों के बीच हुई थी।

7. यह तय कानून है कि कर्ता या हिंदू संयुक्त परिवार के प्रबंधक को हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में अविभाजित हित को पारिवारिक आवश्यकता के लिए वैध विचार के लिए अलग करने का अधिकार है। कर्ता या सह-भागीदार को सह-पक्षीय संपत्ति में अपने अविभाजित हिस्से को अलग करने का अधिकार है और विभाजन के समय खरीदार को केवल अपने पूर्ववर्ती के हिस्से के आवंटन का न्यायसंगत अधिकार प्राप्त होता है।? खरीददार को बेची गई विशिष्ट संपत्ति का आवंटन प्राप्त करने का अधिकार है और उसे यथासंभव, न्यायसंगत नियमों के अधीन, उस संपत्ति पर कब्जा दिया गया है। *बाबा बनाम थिम्मा*, (1884) 7 357 में, पूर्ण पीठ ने माना कि एक अविभाजित हिंदू पिता को सहदायिक संपत्ति

वसीयत करने का कोई अधिकार नहीं है।

8. *सूरजीमनी दोसी बनाम दीनोबुंदो मुल्लिक*, (1857) 6 मूर की भारतीय अपीलें 523, पृष्ठ 553 पर, दायभाग विधि के अंतर्गत न्यायिक समिति ने यह निर्णय दिया कि हिंदुओं की अपनी संपत्ति पर वसीयतनामात्मक शक्ति के संबंध में पूर्व में जो भी स्थिति मानी जाती रही हो, वह शक्ति लंबे समय से मान्यता प्राप्त है और अब उसे पूर्णतः स्थापित माना जाना चाहिए। *टैगोर बनाम टैगोर*, (1872) भारतीय अपीलें (पूरक) 47 में न्यायिक समिति ने इसकी सीमाएँ इस प्रकार निर्धारित कीं कि हिंदुओं में वसीयत का कानून उपहार के कानून के समान है और यद्यपि वसीयतों को सभी दृष्टियों से मृत्यु के पश्चात् प्रभावी होने वाले उपहार के रूप में सार्वत्रिक रूप से मान्यता नहीं दी जा सकती, तथापि सामान्यतः उन्हें उस संपत्ति के संदर्भ में ऐसा ही माना जाता है, जिसे वे अंतरित कर सकती हैं, तथा उन व्यक्तियों के संदर्भ में भी, जिनके पक्ष में वह अंतरित की जा सकती है। *सुब्बारमणि बनाम रामनम्मा*, (1920) आई.एल.आर. 43 मद्रास 420 में यह निर्णय दिया गया कि किसी हिंदू पिता द्वारा अपनी संयुक्त पारिवारिक संपत्ति का अपनी पत्नी के भरण-पोषण के लिए वसीयत द्वारा किया गया दान विधि की दृष्टि से अवैध है।

9. मेयन की हिंदू विधि, 13 वाँ संस्करण, जिसे आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति ए. कुप्पुस्वामी द्वारा संशोधित किया गया है, के पृष्ठ 685 के कंडिका 406 में इस प्रकार कहा गया है "अब सभी राज्यों में यह समान रूप से सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि मिताक्षरा परिवार में किसी सहभाजक द्वारा अपने अविभाजित हित का उपहार या वसीयत द्वारा निपटान पूर्णतः अवैध है। मिताक्षरा विधि द्वारा मान्य अपवादात्मक मामलों में, जहाँ पिता या परिवार के प्रबंधक सदस्य को पैतृक चल या अचल संपत्ति का उपहार देने का अधिकार होता है, उनका उल्लेख कंडिका 377, 393 तथा 394 में किया गया है। कोई सहभाजक, विशेष शास्त्रीय प्रावधानों द्वारा अनुमत प्रयोजन के अतिरिक्त, न तो किसी बाहरी व्यक्ति को और न ही किसी संबंधी को संयुक्त पारिवारिक चल संपत्ति में अपने अविभाजित

हित का उपहार कर सकता है।

10. एन.आर. राघवाचार्य की 'हिंदू विधि', जिसका संपादन स्वर्गीय प्रो. एस. वेंकटारमन ने किया था, जो स्वयं हिंदू विधि के एक प्रामाणिक विद्वान थे, में पृष्ठ 236 पर यह कहा गया है कि कोई भी सहभाजक अपने अविभाजित हित का बिना प्रतिफल के अंतरण नहीं कर सकता। ऐसा अंतरण पूर्णतः शून्य होता है। पृष्ठ 237 पर यह भी कहा गया है कि सहभाजक द्वारा अपने हित का उपहार पूर्णतः शून्य होने के कारण, न तो विबंधन लागू होता है और न ही कोई अन्य व्यक्तिगत विधिक बाधा, जो दाता को हस्तांतरित संपत्ति की पुनः प्राप्ति के अपने अधिकार का दावा करने से रोक सके। सामान्य सिद्धांत के एक अपवाद के रूप में यह कहा गया है कि किसी प्रौढ़ सहभाजक द्वारा किसी अवयस्क सहभाजक के पक्ष में किया गया उपहार वैध हो सकता है। किंतु संयुक्त पारिवारिक संपत्ति के उपहार का कोई भी लेन-देन पूर्णतः शून्य होता है और वह दाता को भी बाध्य नहीं करता।

11. मेयने के हिंदू कानून के कंडिका 379 में पृष्ठ 661 पर कहा गया है कि पैतृक चल संपत्ति की उचित सीमा के भीतर स्नेह के माध्यम से उपहार देने की पिता की शक्ति को विधिवत मान्यता दी गई है। *रामलिंगा बनाम नारायण* (1922) 49 इंडियन अपील, 168 पृष्ठ 173 में न्यायिक समिति ने माना कि हिंदू कानून के तहत पिता को उचित सीमा के भीतर पुत्री को 8,000 रुपये की चल संपत्ति दान करने का अधिकार निःसंदेह है, लेकिन संयुक्त परिवार की संपत्ति का स्नेहपूर्वक किया गया दान अमान्य है। वसीयतकर्ता की मृत्यु के क्षण से सहदायिकों का अधिकार उत्तरजीविता द्वारा निहित हो जाता है, और इसलिए वसीयत के प्रभाव में कुछ भी नहीं रह जाता है, जैसा कि *लक्ष्मण दादा नायक बनाम पामचंद्र* (1881) 7 इंडियन अपील्स 181 (पी.सी.) में कहा गया है। *अप्पनपत्र बनाम श्रीनिवास* (1917) एल.एल.आर. 40 मद्रास 1122 में सहदायिकों की सहमति से किया गया दान वैध माना गया था।

12. *द्वारमपुडी नागरत्तांबा बनाम कुनुकु रामय्या एवं अन्य*, (1968) 1 एससीआर 43

में इस न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि मद्रास स्कूल की मिताक्षरा विधि के अंतर्गत, जिसके द्वारा 'V' शासित था, उसे सहभाजिता संपत्ति में अपने अविभाजित हित का अपनी उपपत्नी के पक्ष में उपहार करने का कोई अधिकार नहीं था। किंतु एक सहभाजक द्वारा अपने अविभाजित हिस्से का उपहार किसी अन्य सहभाजक के पक्ष में, अन्य सहभाजकों को अपवर्जित करते हुए किया जाना, अवैध नहीं है *वेंकट सुब्बम्मना बनाम रत्नम्मल*, एआईआर 1987 एससी 1757। इस न्यायालय ने *मुकुंद सिंह बनाम वजीर सिंह*, (1972) 4 एससीसी 178 में यह भी कहा कि सहभाजक की संपत्ति का किसी सदस्य द्वारा किया गया उपहार शून्य होता है। दूसरे शब्दों में, यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि सहभाजिता संपत्ति का *जीवितावस्था* में उपहार द्वारा किया गया निपटान सिवाय इसके कि वह अन्य सहभाजकों की सहमति से हो, या सहभाजकों के बीच हो, अथवा किसी अपवादात्मक परिस्थिति में हो शून्य है। चूँकि प्रतिफल के बिना किया गया उपहार *पूर्णतः* शून्य होता है और दाता के जीवनकाल में ही *तत्काल* प्रभावी हो जाता है, इसलिए वह वसीयतनामात्मक उत्तराधिकार नहीं माना जा सकता। अतः अधिनियम की धारा 30 ने मिताक्षरा स्कूल के अधीन सहभाजिता संपत्ति में हिंदू सहभाजक के हित के वसीयतनामात्मक निपटान के विधि-सिद्धांत में केवल इसी सीमा तक परिवर्तन किया है, जिसे भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 55 तथा अनुसूची III या उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अनुसार लागू किया जाना है। अपीलकर्ता, जो कि उपहारग्राही है, उपहार के आधार पर अधिकारों के उत्तराधिकार द्वारा कोई हित अर्जित नहीं करता, जिससे वह दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 10 के अंतर्गत मृत वादी के हित का प्रतिनिधित्व कर सके। अतः, भले ही भिन्न कारणों से, हम इस विषय में उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष की पुष्टि करते हैं कि अपीलकर्ता आदेश 22 नियम 10 के संचालन से अधिकारों के उत्तराधिकारी के रूप में नहीं आती। परिणामस्वरूप, इस आधार पर अपीलकर्ता का दावा अस्वीकार किया जाता है।

13. हालाँकि, वह अपने इस तर्क में सही है कि वह दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश

22 नियम 3 के तहत ब्याज में उत्तराधिकारी है, जैसा कि अधिनियम की धारा 6 (1) के परंतुक के संचालन और स्पष्टीकरण । से देखा जाता है, जिसके बारे में इस प्रकार है:

"स्पष्टीकरण 1. -इस धारा के प्रयोजन के लिए, एक हिंदू मिताक्षरा सहदायिक का हित, संपत्ति में उस हिस्से के रूप में माना जाएगा जो उसे आवंटित किया जाता यदि उसकी मृत्यु से ठीक पहले संपत्ति का विभाजन हुआ होता, चाहे वह विभाजन का दावा करने का हकदार हो या नहीं।

धारा 6 का साधारण पाठ स्पष्ट रूप से यह प्रावधान करता है कि जब कोई पुरुष हिंदू, अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात्, अपनी मृत्यु के समय मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में हित रखते हुए मृत्यु को प्राप्त होता है, तो उसके हित का उत्तराधिकार, उपबंध के प्रवर्तन से, अनुसूची में वर्ग-1 में विनिर्दिष्ट उसके जीवित संबंधियों पर जाता है। मृतक का मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में हित, यथास्थिति, अधिनियम के अंतर्गत वसीयतनामात्मक या अवसीयत उत्तराधिकार द्वारा जाएगा, न कि उत्तरजीविता द्वारा। दूसरे शब्दों में, मृतक सहभाजक के परिवार में किसी वर्ग-1 की महिला उत्तराधिकारी के होने से सहभाजिता संपत्ति के उत्तरजीविता द्वारा उत्तराधिकार की व्यवस्था बाधित हो जाती है और अधिनियम के अंतर्गत अनुसूची में निर्दिष्ट क्रम के अनुसार उत्तराधिकारियों के बीच वसीयतनामात्मक या अवसीयत उत्तराधिकार का मार्ग खुल जाता है। इस धारा के प्रयोजन के लिए, किसी हिंदू सहभाजक का हित वह हिस्सा माना जाएगा जो उसे संपत्ति के विभाजन की स्थिति में उसकी मृत्यु से ठीक पहले आवंटित किया गया होता, चाहे वह विभाजन का दावा करने का अधिकारी था या नहीं। अतः विधिक कल्पनाs के माध्यम से यह वैधानिक रूप से मान लिया जाता है कि उसकी मृत्यु से ठीक पहले मृतक और अन्य सहभाजकों के बीच वास्तव में विभाजन हो चुका था। इसका अपरिहार्य परिणाम यह है कि पवित्री देवी, जो अनुसूची के अनुसार वर्ग-1 की महिला उत्तराधिकारी है, को मिताक्षरा सहभाजिता संपत्ति में मृतक के हित में से, उसकी मृत्यु के समय मानी गई काल्पनिक विभाजन की स्थिति में, अपना हिस्सा प्राप्त होगा।

14. तत्काल सवाल यह है कि क्या पहली अपीलकर्ता ब्रह्मदेव सिंह की बेटी है। उच्च न्यायालय ने उनके दावे को मुख्य रूप से दो आधारों पर खारिज कर दिया; पहला यह कि उनके पति के नाम के विवरण में विसंगति थी और मुंडन समारोह (मुंडन) में उन्हें उमा शंकर सिंह की बेटी बताया गया था। जहाँ तक पहले आधार का संबंध है, हम पाते हैं कि यह पूरी तरह से अप्रासंगिक है और उसके मामले में कोई असर नहीं डालता है। मुंडन समारोह के संबंध में, कहा जाता है कि यह एक निजी रिकॉर्ड में पाई गई प्रविष्टि पर आधारित है जिसे एक गवाह के पिता द्वारा 30 साल पहले बनाए रखा गया था। एक निजी पक्ष की अभिरक्षा से प्रस्तुत एक निजी दस्तावेज़, हालांकि 30 साल पुराना है, का वजन सार्वजनिक दस्तावेज़ के बराबर नहीं हो सकता है, और न ही किसी बच्चे को नाजायज बनाने के लिए इस पर भरोसा किया जा सकता है। ऐसा पाया जाता है कि बच्चे के पितृत्व से इनकार करने के लिए इस तरह के एक अनिश्चित दस्तावेज़ का उपयोग नहीं किया जा सकता है। अपीलकर्ता के पितृत्व को साबित करने के लिए 11 गवाहों का विशाल मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत किया गया था कि उसके पिता ब्रह्मदेव सिंह हैं। उच्च न्यायालय द्वारा उस साक्ष्य की गहन जांच के लिए पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया था। इसे अस्वीकार करने के लिए कोई वैध आधार नहीं दिया गया था। इसलिए, मूल्यांकन के क्षेत्र में गहराई से उतरे बिना, हमने इसका अध्ययन किया है और हमें मौखिक साक्ष्य को अस्वीकार करने का कोई ठोस आधार नहीं मिला है। इसके अलावा मृतक ने स्वयं 1963 में इस शिकायत से जुड़ी भूविज्ञान का वर्णन किया कि पवित्रा देवी उनकी बेटी और उनका बेटा पोता है। उच्च न्यायालय ने कहा कि महिलाओं के भूविज्ञान में वर्णन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता थी या नहीं, यह अब बहुत प्रासंगिक है। वास्तव में, यह स्थापित करता है कि उनकी मृत्यु से बहुत पहले उन्होंने घोषणा की कि पवित्रा देवी उनकी बेटी हैं। उपहार विलेख में भी, हालांकि हमें वह दान विलेख अमान्य लगता है, उसमें भी उसने उसे अपनी बेटी के रूप में दोहराया था। यह उनकी मृत्यु से लगभग एक साल पहले की बात थी। हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि सबूत यह स्थापित करते

हैं कि पवित्रा देवी ब्रह्मदेव सिंह की बेटी हैं। वह प्रथम श्रेणी की उत्तराधिकारी होने के नाते धारा 6 के तहत निर्वसीयत उत्तराधिकार द्वारा मृतक की संपत्ति में सफल हुई और वह विभाजन कार्रवाई में संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने की हकदार है। तदनुसार एस 6 के संचालन द्वारा आदेश 22 नियम 3 दीवानी प्रक्रिया संहिता के साथ पठित अधिनियम की वह मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने की हकदार है। प्रतिस्थापन के लिए आवेदन सफल रहा है। उसे मृतक अपीलकर्ता के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में दर्ज किया जाता है। उच्च न्यायालय के आदेश को तदनुसार अपास्त कर दिया जाता है। मामला गुण-दोष पर निपटारे के लिए उच्च न्यायालय को भेजा जाता है। अपील की अनुमति है लेकिन लागत के बारे में कोई आदेश नहीं है।

अपील की अनुमति दी गई।

आर.एस.के.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।